SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

महात्मा गाँधी एवं भारतीय नारी समाज : एक समीक्षा

सुधा मिश्रा, शोधार्थी, **उमेश कुमार,** Ph.D., शोध निर्देशक, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
विनोद बिहारी महतो कोयलांचल, विश्वविद्यालय, धनबाद, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Authors
सुधा मिश्रा, शोधार्थी
उमेश कुमार, Ph.D.

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 15/04/2024
Revised on : -----
Accepted on : 18/06/2024
Overall Similarity : 02% on 08/06/2024

शोध सार

नारी में गाँधी जी ने अहिंसा वृत्ति के दर्शन किये थे। उन्होंने कहा था''स्त्री में हिंसा की जीती जागती मूर्त्ति है। अहिंसा का अर्थ है असीम प्रेम और असीम प्रेम का अर्थ है कष्ट सहने की अपार शक्ति। पुरुष की जननी स्त्री के सिवा और किसी में यह शक्ति प्रकट नहीं हो सकती है। स्त्री जो प्रेम अपने बच्चे से करती है अगर यह प्रेम सारी मानव जाति को दे और यह भूल जाय कि वह कभी भी पुरुष के भोग की चीज थी या भविष्य में हो सकती है तो उसे पुरुष की माता उसकी निर्मात्री और पथ प्रदर्शिका का गौरवपद प्राप्त हो जायगा। युद्ध में फंसी हुई दुनिया अमृत की प्यासी है। उसे शान्ति की कला सिखाने का काम स्त्री का ही हैं।'' अहिंसा विशेष तौर पर स्त्रियों का ही हथियार है''–ऐसा उनका मानना था। इसी संदर्भ में उन्होंने बताया ''अहिंसा के क्षेत्र में पुरुष से स्त्री ज्यादा खोज भी कर सकती है और ज्यादा साहस पूर्ण कदम भी उठा सकती है। मेरा विश्वास है कि जैसे पशु– सुलभ साहस में पुरुष स्त्री से आगे हैं वैसे ही आत्मत्याग के साहस में स्त्री पुरुष से कहीं बढ़कर है।'' गाँधी जी ने बताया था कि – ''अहिंसा की लड़ाई में कष्ट–सहन ज्यादा से ज्यादा करना पड़ता है और स्त्रियों से ज्यादा शुद्ध और ऊँचे दरजे का कष्ट–सहन और कौन कर सकता है?''गाँधी जी ने स्त्रियों के साहस तथा धैर्य का परिचय देते हुये कहा था– ''स्त्रियों ने गैर कानूनी नमक तैयार किया, विदेशी कपड़ो की दुकानों और शराब की दुकानों पर उन्होंने धरना दिया और बेचने और खरीदने वालों दोनों को उनके कुकायों से विरत करने की कोशिश की। अपने दिल में साहस और दया लेकर वे शराबियों के पीछे–पीछे उनके अड्डों तक पहुँचती थीं। वे जिस तरह जेल गयीं और उन्होंने लाठियों की मार जिस तरह सह ली उसकी बराबरी विरले ही पुरुष कर सके।'' स्त्री शक्ति का विवेचन करते हुये उन्होंने

बताया ''स्वराज्य की प्राप्ति में भारत की स्त्रियों का उतना ही हिस्सा होना चाहिये जितना पुरुषों का। यह भी संभव है कि इस शांत लड़ाई में स्त्री पुरुष से बाजी मार ले जाय और उसे कोसों पीछे छोड़ दे।''गाँधी जी मानते थे कि स्त्री जब कोई कार्य युद्ध और सही भावना से करती है तो पहाड़ों को हिला देती है।

मुख्य शब्द

नारी प्रथा, वैदिक साहित्य, स्त्री–पुरूष समानता व सहभागिता.

भूमिका

प्राचीन वैदिक सभ्यता में नारियों की दशा बहुत सम्मानपूर्ण थी। इस काल में पुत्रों की भाँति पुत्रियों का भी उपनयन संस्कार होता था। इन्हें शिक्षा पाने का अधिकार था। वे विदुशी, दार्शनिक, चिकित्सक आचार्या तथा नृत्यगान विद्या में कुशल होती थीं। साधारण स्त्री भी कताई–बुनाई कर निर्वाह करती थी। विवाह पूर्ण वयस्क होने पर होता था। दहेज प्रथा नहीं थी। विधवा के पुर्नविवाह की प्रथा थी।

भारतीय नारी वैदिक युग में सम्मानपूर्ण पद पर अधिक दिनों तक प्रतिष्ठित नहीं रह सकी। उत्तर वैदिक युग में यज्ञों का आडंबर बहुत बढ़ गया जटिलताएं बढ़ गयीं। अशिक्षित पुरोहितों को महत्त्व दिया जाने लगा और पत्नियों को यज्ञाधिकार से वंचित किया जाने लगा। 600 ई. पू. तक ऐसा हुआ।

200 ई. पू. कन्याओं का उपनयन संस्कार बन्द हो गया तथा शिक्षा से इन्हें वंचित कर दिया गया। ईसा की तीसरी शती से हिन्दू नारी के लिये पराधीनता, निंदा, अशिक्षा, परदा, विधवा विवाह–निशद, बाल विवाह, सती प्रथा, सतीत्व के एकांगी आदर्श और नैतिकता के दूसरे मानदंड आदि की वजह से नारी समाज की स्थिति जटिलतर होती गई। स्त्रियों की विवशता और पुरुषों की प्रभुता सर्व सामान्य हो गयी।

यद्यपि बुद्ध महिलाओं के प्रति उदासीन रहे तथापि बौद्ध काल में महिलाएं जबरदस्ती योगनियाँ बनाई जाती थीं। मिला जुलाकर सामाजिक स्थिति नारी विरोधी थी। मध्यकालीन भारतीय की सामाजिक स्थिति मुसलमान बादशाहों की विलासिता के कारण बदतर होती गई। महिलाओं को परदे में रहने को मजबूर किया गया। उनका कार्य क्षेत्र सीमित हो गया था। कन्या के जन्म लेते ही परिवार दुःखी हो जाता था। एक खास जाति में लड़की पैदा होते ही मार दी जाती थी। लड़की का विवाह माता–पिता अपनी इच्छानुसार कर देते थे। विधवाओं को कठिन जीवन जीना पड़ता था तथा उन्हें घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। परदे का घोर साम्राज्य उच्च घरानों में था। तिलक–दहेज की प्रथा का खूब चलन था। बड़े–बड़े राजाओं ने मुगल बादशाह को अपनी कन्यायें भेंट देकर झंझटों से मुक्ति पाई। विजातीय घरों में उन्हें घोर पीड़ाओं का सामना करना पड़ा।

अंग्रेजों के शासन काल में भी परदा प्रथा का प्रचलन रहा। उच्च वर्ग की औरतें अदालत नहीं जाती थीं, जज ही उनके घर जाते थे तथा परदे के भीतर से बातें होती थीं। तिरहुत में वर–वधू दिन के समय बात नहीं कर सकते थे। अंग्रेज सरकार ने पैशाचिक सती प्रथा पर रोक लगाई। विधवा विवाह पर प्रतिबन्ध हटा। बड़े–बड़े परिवारों की कन्यायें पढ़ने–लिखने लगीं।

इसी समय राजाराम मोहनराय का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने नारी जागरण के लिये अनेक प्रयत्न किये। फलस्वरूप 1829 में लार्ड विलियम बेंटिक ने सती प्रथा को गैर कानूनी घोषित कर दिया। 1828 में ''ब्रह्म समाज'' की स्थापना हुई जिसका एक उद्देश्य महिलाओं की स्थिति में सुधार लाना था। बिहारी महिलाओं को भी थोड़ा बहुत लाभ हुआ। 1849 में बम्बई में ''परमहंस समाज'' की स्थापना हुई। 1964 में केशवचन्द्र सेन ने ''प्रार्थना समाज'' खोली जिसका उद्देश्य था– (1) जातिप्रथा का विरोध (2) विधवा–विवाह का समर्थन (3) स्त्री शिक्षा का प्रचार और (4) बाल –विवाह का निशेध।

इसी क्रम में कई समाज सुधारक आये। विद्यासागर ने अपनी विधवा पुत्री का विवाह कर समाज में नई क्रांति ला दी। कर्वे ने तो पूना में महिला विश्व–विद्यालय ही खोल दिया। रामाबाई रानाडे ने बालिकाओं की संस्था

''शारदा–सदन'' की स्थापना की। आर्य समाज के प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती वैदिक धर्म के सहारे नारी उत्थान के कार्य में लगे। बिहार के महिला–समाज पर इसका बहुत बड़ा असर हुआ। उनके अनुयायी स्वामी रामतीर्थ और स्वामी विवेकान्द ने भी स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाने के प्रयत्न किये। श्रीमती एनीवेसेन्ट ने थियोसोफिकल सोसाइटी के माध्यम से नारी जागरण का कार्य किया। फिर भी महिलायें परदे की ही वस्तु बनी रहीं। इसी कड़ी में गाँधी जी का योगदान अप्रतिम रहा है।

1885 में बम्बई के एक कोने में कांग्रेस का जन्म हुआ। निः सन्देह भारतीय महिलाओं की जागृति में काँग्रेस का हाथ है किन्तु उन्नीसवीं सदी के अन्त तक कांग्रेस ने भी पर्याप्त शक्ति संचित नहीं की थी।

उन्नीसवीं सदी के अन्त तक भी बिहार की नारियाँ घोर अंधकारमयी अवस्था में बहुत कुछ मध्यकालीन स्थिति में ही पड़ी हुई थीं। उपर्युक्त वर्णित समाज सुधारकों के प्रयास के बावजूद भी बिहार की नारियाँ प्राचीन लोकों पर चलनेवाली और जड़ता ग्रस्त थी। शिक्षा का उनमें पूर्णतया अभाव था। केवल समझदार परिवारों में स्त्रियों की स्थिति सुधर रही थी और स्त्रियों के प्रति सामाजिक और शैक्षिणिक मान्यताओं में परिवत्तन की प्रक्रिया चल रही थी।

बीसवीं सदी के द्वितीय दशक में गाँधीजी का प्रादुर्भाव हुआ। महिला उत्थान की दिशा में एक नई किरण दिखाई दी। गाँधीजी ने स्वराज्य आन्दोलन के कार्यक्रमों द्वारा सार्वजनिक सेवा के लिये महिलाओं को घर से बाहर लाने तथा कुरीतियों से सावधान कर उनके सद्‌गुणों को व्यापक बनाने और आर्थिक स्वावलंबन, साहस एवं उत्तरदायित्व के साथ उन्हें ऊँचा उठाने का प्रयास किया।

स्वराज्य प्राप्ति गाँधीजी के जीवन का ध्येय था। स्वराज्य प्राप्ति की जिस अहिंसक पद्धति को उन्होंने अपनाया था उसमें समाज के अर्धांग को यों ही छोड़ देना संभव नहीं था। इसके कई कारण हैं जिनपर विचार किए बिना गाँधी जी के नारी–दर्शन की पृष्ठभूमि अछूती रह जायगी। उनकी स्वराज्य की लड़ाई का हथियार था असहयोग। कुछेक हजार अँग्रेज भारतीयों के सहयोग से ही 40 करोड़ भारतीयों पर शासन कर रहे थे। भारतीयों के असहयोग करने पर उनकी हस्ती टिक नहीं सकती थी लेकिन इस असह्योग में निः शस्त्र भारतीयों को सशस्त्र अंग्रेजों से जूझना था। स्त्री जाति को प्रचलित असमर्थ अवस्था में छोड़कर पुरुष वर्ग जूझ नहीं सकता था। पुरुष के जेल चले जाने पर बाल–बच्चों की गृहस्थी की पूरी जिम्मेवारी स्त्री पर आ जाती थी इसलिये स्त्रियों की दशा सुधारकर उनमें देश प्रेम बलिदान एवं उत्तरदायित्व की भावना साहस और शक्ति का विकास करना आवश्यक था साथ ही असहयोग जीवन की आवश्यकताओं में स्वाश्रयी हुए बिना टिक नहीं सकता था। उस समय की परिस्थति में ग्रामोद्योग एवं गृह–उद्योग के बिना ये स्वाश्रयी नहीं हो सकते थे। इनमें से अधिकांश कार्य स्त्रियों के अधिक अनुकूल थे। पुरुष वर्ग इन कामों को अकेला कर भी नहीं सकता था।

गाँधीजी का यह मानना था कि अहिंसा के सर्वोत्तम रूप का प्रदर्शन स्त्री ही कर सकती है, क्योंकि वह किसी भी हालत में हिंसक नहीं बन सकती। स्त्री को वे प्रेरक शक्ति मानते थे तभी तो दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह से अन्त तक थे बा को हमेशा साथ रखते थे तथा अन्य महिलायों को भी इस आन्दोलन में समाहित किये थे। गाँधीजी के स्वराज्य आन्दोलन का अर्थ जीवन की प्रचलित मान्यताओं का परिवर्तन करना था। उनका मानना था कि जीवन की बुनियाद सदा से माता के हाथ बनती आई है और पत्नी से प्रभावित होती रही है।

गाँधीजी ने नारी उत्थान के लिये अथक प्रयास किया। गाँधीजी जी का विश्वास था कि जब तक राष्ट्र की जननी नारियाँ ज्ञानवान नहीं होतीं तथा जब तक उनसे संबंधित कानूनों रिवाजों और पुरानी रूढ़ियों में मौलिक परिवर्तन नहीं होता तब तक राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकता। इतना ही नहीं उनका तो यह भी विश्वास था कि यदि हम अहिंसक समाज का निर्माण और दुनियाँ में शान्ति की स्थापना चाहते हैं तो नेतृत्व स्त्रियों को अपने हाथ में लेना चाहिये।

इसके अतिरिक्त गाँधीजी ने नारी को समदृष्टि देने की कोशिश की कि वह अपने को पहचान कर पुरुष के झूठे दंभ का जीर्ण वस्त्र उतार फेंके। कोई कारण नहीं कि पुरुष मनमानी करे केवल रोटी कपड़ा देकर जब कि बदले में वह सहस्त्र गुना लेता है।

स्त्रियों के उत्थान का विचार गांधीजी के प्रत्येक कार्यक्रम के साथ गूंथा रहता था। उन्होंने नारी जाति के हर पहलू पर गंभीरता से विचार किया था। आश्रम में आयी बहनों को आर्थिक रूप से सक्षम बनाकर उनका चारित्रिक विकास करने तथा सार्वजनिक कामों का उत्तरदायित्व उन्हें देकर सार्वजनिक सेवा के योग्य बनाने के लिये वे बराबर प्रयत्नशील रहे। आश्रम की बहनों से उन्होंने कहा था ''बहनों के बीच सहयोग अत्यंत आवश्यक है। तुम सारे आश्रम को एक कुटुम्ब बनाओ और उसके द्वारा विश्व–कुटुम्ब–भावना की तैयारी करो। आज स्त्री में विकास की खास जरूरत है क्योंकि स्त्रियों के हाथ में स्वराज्य की कुंजी है। तुम कुशल बनकर पवित्र जीवन बिताकर सारे भारत वर्ष में फैल जाओ। लोगों का यह ख्याल कि स्त्री मांगने वाली और अबला होती है, गलत साबित कर देना। सभा में इकट्ठी हो ओ तब बहुत बातचीत न किया करो। लड़ाई–झगड़े का नासूर मिटा ही देना चाहिये। हम इकट्ठे तो इसलिये होते हैं कि हमारे दुख दर्द मिट जायें।

गाँधी जी मानते थे कि स्वराज्य की कुंजी स्त्रियों के पास है, किन्तु उनमें बहुत सारी कमियां जैसे अशिक्षा निरुद्यम गहने के प्रति प्रेम आदि हैं। इसे दूर कर हम स्त्री जाति का सही उपयोग कर सकते हैं, किन्तु इस क्रांति में भी किसी नारी को ही आगे आना होगा जो द्रौपदी जैसी क्रांतिकारिणी हो।

पुरुषों की शासन वृत्ति का परिहास करते हुए उन्होंने नारी को पुरुष के समकक्ष ठहराया था। सत्य का पुजारी होने के नाते उन्होंने कुछ मामलों में उसे पुरुष से भी श्रेष्ठ माना था। इधर–उधर बिखरे उनके वचनों से उनके नारी–दर्शन का यह भाव स्पष्ट होता है। स्त्री और पुरुष की आत्मा के संबंध में गाँधीजी ने कहा था– ''हम तब आत्मा का अनुभव प्राप्त करना चाहते हैं। आत्मा न पुरुष है न स्त्री न बालक है न वृद्ध ये सारे गुण शरीर के हैं ऐसा शास्त्र और अनुभव दोनों कहते हैं। तुम में (बहनों में) और मुझमें एक ही आत्मा है।''गाँधी जी स्त्रियों की सम्पूर्ण आजादी के पक्ष धर थे। इसी उद्‌गार को व्यक्त करते हुये उन्होंने कहा था–''मेरी तीव्र इच्छा है कि हमारी स्त्रियों को पूरी–पूरी आजादी मिलनी चाहिये।'' धर्मशास्त्र का हवाला देते हुये उन्होंने बताया ''हमारे साहित्य में पत्नी के लिये 'अर्द्धांगनी' और 'सहधर्मणी' शब्दों का प्रयोग हुआ है। पति–पत्नी को देवी कहकर सम्बोधित करता था जिससे स्त्रियों के प्रति तिरस्कार की भावना तो सूचित नहीं होती। लेकिन दुर्भाग्य से एक समय ऐसा आया है जब स्त्री से उसके कई अधिकार छीन लिये गये हैं और उसका दर्जा छोटा कर दिया गया है।

स्त्री की मानसिक शक्ति की वकालत करते हुए गाँधीजी ने कहा था कि स्त्री–पुरुष की सहचरी है। उसकी मानसिक शक्तियाँ पुरुष से कहीं भी कम नहीं हैं। उसे पुरुष के हर एक काम में हाथ बंटाने का हक है और आजादी का उसे उतना ही अधिकार है जितना पुरुष को। अपने क्षेत्र में उसकी सर्वोच्चता उसी प्रकार स्वीकार की जानी चाहिये जिस प्रकार पुरुष की उसके क्षेत्र में। स्त्रियों से क्रांति का आवाह्न करते हुए गाँधी ने कहा था–स्त्रियों को पुरुषों के लिये प्रचलित शब्दों और मुहावरों में पुरुष का आधा अंग कहा गया है इसलिये मैं स्त्रियों को सलाह देता हूँ कि वे तमाम अनचाही और भद्दी पाबन्दियों के खिलाफ सविनय विद्रोह शुरू कर दें। अलबत्ता ऐसा करने के पहले विद्रोह करने वालों को पवित्र होना चाहिये और विरोध का तरीका बुद्धियुक्त होना चाहिये। स्त्री–पुरुष की समानता का अर्थ बताते हुए गाँधी जी ने कहा था ''स्त्री–पुरुष की समानता का अर्थ यह नहीं है कि उनके धन्धे भी एक ही हों। कोई स्त्री शिकार खेले या भाला चलाये तो कानून उसे मना नहीं कर सकता। लेकिन जो काम पुरुष का है उससे वह सहज ही झिझकती है। प्रकृति ने स्त्री–पुरुष को एक–दूसरे का पूरक बनाया है, जैसे उनके शरीर भिन्न हैं वैसे उनके काम भी अलग–अलग हैं।''

गाँधीजो चाहते थे कि स्त्रियों पर ऐसी कोई कानूनन रुकावट नहीं होनी चाहिये जो पुरुषों के लिये नहीं है। वे समाज में हो रहे लड़के–लड़कियों में भेदभाव को अनुचित मानते थे तथा उनमें बराबरी का दरजा चाहते थे। लड़के–लड़कियों के जन्म संबंधी सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करते हुए गाँधी जी ने कहा था ''स्त्री जाति के प्रति अन्याय पूर्ण भेद–भाव युग–धर्म के खिलाफ है।''लड़के के जन्म पर खुशियाँ मनाने और लड़की के जन्म पर शोक करने को वे अन्याय पूर्ण मानते थे। दोनों ही भगवान की देन है। दोनो को जीवन का समान अधिकार है और संसार का प्रवाह जारी रखने के लिये दोनों की एक–सी जरूरत है।

गाँधीजी चारित्रिक दृष्टिकोण से भी महिलाओं का स्थान पुरुषों से अधिक ऊँचा मानते थे, क्योंकि उनके लिए उनकी दृष्टि में स्त्रियाँ त्याग मूक तपस्या नम्रता श्रद्धा और ज्ञान की मूर्ति थीं। वे कहते थे ''राम के पहले सीता और कृष्ण के पहले राधा के नाम का उल्लेख अकारण नहीं है उसका उचित कारण है।''

स्त्री–पुरुषों में समान आत्मा का होना दोनों की समस्या दर्जा जीवन बौद्धिक व मानसिक शक्ति कर्त्तव्य और भावना की समानता को स्वीकारते हुए गाँधीजी ने दोनों को एक दूसरे का पूरक माना है और इस नाते दोनों के अपने क्षेत्र में समान स्वाधीनता के अधिकार की पुष्टि की है। ''स्त्री को अबला कहना उसकी मानहानि है यह पुरुष का स्त्री के प्रति अन्याय है। यदि बल का अर्थ पशुबल है तो बेशक स्त्री पुरुष से कमजोर है क्योंकि उसमें पशुता कम है। लेकिन अगर बल का अर्थ नैतिक बल है तो स्त्री पुरुष से बेहद ऊँची है। क्या उसकी सहज बोध की शक्ति पुरुष से अधिक नहीं है? क्या उसकी न्याय शक्ति पुरुष से ज्यादा नहीं है? क्या उसकी सहिष्णुता और उसका साहस पुरुष को पीछे नहीं छोड़ देते? उसके बिना पुरुष की हस्ती ही सम्भव नहीं हो सकती थी। अगर अहिंसा हमारे जीवन का धर्म है तो भविष्य स्त्री के हाथ में है।''

गाँधी जी स्त्री को त्याग की मूर्ति मानते थे। बापू का विश्वास था कि नैतिक बल की दृष्टि से स्त्री पुरुष से बहुत ऊँची है। वे मानते थे कि 'पुरुष कभी नारी के त्याग शक्ति सहिष्णुता एवं साहस का मुकाबला नहीं कर सकता।'

गाँधीजी स्त्री–पुरुषों को अपनी हालत पर संतोष रखने की सलाह देते तथा प्रकृति द्वारा नियत कर्त्तव्यों के पालन का रास्ता बताते थे। वे स्त्रियों के सामने सीता का उदाहरण पेश करते हुये स्त्रियों को उचित रास्ते पर चलने तथा इस रास्ते में आने वाले कष्टों को नम्रता पूर्वक सहन करने की सलाह देते थे।

गाँधीजी का मानना था कि ''पत्नी पति की अर्धांगिनी, सहकारी और मित्र है। पति के अधिकार और कर्त्तव्य दोनों में उसका बराबर का हिस्सा है। वे पति–पत्नी कों एक ही चीज के दो पहलू मानते थे। इतना ही नहीं गाँधीजी स्त्रियों को अपने पतियों पर निगरानी रखने की भी सलाह देते थे। उनकी दृष्टि में पति और पत्नी दोनों के लिये एक दूसरें के चरित्र की रक्षा करना एक धार्मिक कर्त्तव्य है। वे मानते थे कि पति और पत्नी एक दूसरे के सद्‌गुणों के समान रूप से भागीदार हैं।'' पति–पत्नी में किसी विषय पर मतैक्य नहीं रहने पर एक–दूसरे को मजबूर करने से गाँधीजी ने मनाही की थी तथा समझाने–बुझाने के ही रास्ते को उपयुक्त बताया था।

निष्कर्ष

स्त्रियों में आंशिक क्रांति का मंत्र फुँकते हुये गाँधी जी ने कहा था कि पति कभी–कभी अपने अधिकार का दुरुपयोग करते हैं और पशुवत व्यवहार करने पर उतारू हो जाते हैं। इस तरह के अत्याचार से बचाव कानून का आश्रय लेने में नहीं बल्कि विवाहित स्त्रियों को सच्चे अर्थ में सुशिक्षित बनाने और पतियों के अमानुशिक अत्याचार के विरुद्ध लोकमत जागृत करने में है। गाँधीजी ऐसी स्थिति में कानून की शरण लेना ठीक नहीं समझते थे। कानून द्वारा पति को सजा मिल सकती है या पत्नी को आर्थिक सहायता लेकिन इससे सती स्त्री को सुख नहीं मिल सकता। पति का सुधार भी इससे संभव नहीं इसलिये गाँधीजी ने समाज को इस रास्ते पर चलने की मनाही की थी। उन्होंने इसके लिये सही रास्ता बताया कि–''ऐसी स्त्री को समझाकर सार्वजनिक सेवा के योग्य बनाने का प्रयत्न करना चाहिये'' स्त्रियों द्वारा भूल हो जाने पर गाँधी जी का विचार था कि अगर ऐसी स्त्री सच्चे दिल से पछतावा करे और प्रायश्चित्त कर भूल सुधार ले तो पति का पवित्र कर्त्तव्य होता है कि पत्नी को अपना ले।

संदर्भ सूची

1. तेन्दुलकर, डी. जी. (2016) *महात्मा : लाइफ ऑफ एम. के. गाँधी,* प्रकाशन विभाग दिल्ली, भारत सरकार।
2. वर्मा, वी. पी. (1995) *द पोलिटिकल फिलोस्फी ऑफ महात्मा गाँधी एण्ड सर्वोदय,* लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. 405–409।

3. धवन, गोपीनाथ (1963) *सर्वोदय तत्व दर्शन,* नवजीवन, अहमदाबाद, पृ. 57।
4. प्रसाद, महादेव (1973) *महात्मा गाँधी का समाजदर्शन,* हरियाणा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. 82।
5. प्रभु, आर. के. (1960) (स.) *मेरे सपनो का भारत,* नवजीवन अहमदाबाद, पृ. 19–20।
6. गाँधी, एस. के. (1928) *सत्य के साथ मेरे प्रयोग,* अहमदाबाद, नवजीवन, पृ. 128।
7. वर्मा, वी. पी. (1989) *आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन,* लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, पृ. 407–408।

****